महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बिहार

मानविकी एवं भाषासंकाय

संस्कृत विभाग

कक्षा- एम.ए/एम्.फिल्/पीएच्.डी

विषय - श्री हर्ष (नैषधं विद्वदौषधम्)

प्रो. प्रसून दत्त सिंह
अध्यक्ष, संस्कृत विभाग
महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय

श्री हर्ष (नैषधं विद्वदौषधम्)

- श्री हर्ष संस्कृत वाङ्मय में पाण्डित्यपूर्ण रचनाओं के प्रतिनिधि कवि हैं। बृहत्त्रयी (किरातार्जुनीयम्, शिशुपालवधम् तथा नैषधीयचरितम्) के रचयिताओं में श्री हर्ष की नैषध को श्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। नैषध अत्यन्त विशालकाय काव्यग्रन्थ है जिसमें २२ सर्ग तथा लगभग तीन हजार श्लोक (२८३०) हैं। महाभारत और हरविजय के उपरान्त नैषध की गणना सर्वाधिक विशद् महाकाव्य के रूप में होती है।
- 'नैषधीयचरित' का कथानक यद्यपि महाभारत के नलोपाख्यान का ही रूपान्तर है, जिसमें नल-दमयन्ती के प्रणय से परिणय तक की साङ्गोपाङ्ग वर्णित है, किन्तु श्री हर्ष की वैदग्धपूर्ण लेखनि ने इसे अत्यन्त सरस तथा मनोरम बना दिया है।

- वस्तुतः श्री हर्ष न केवल एक उच्चस्तरीय महाकवि थे अपितु एक प्रगल्भ तार्किक तथा प्रकाण्ड पण्डित भी थे। अपने पाण्डित्य के बल पर इन्होंने न केवल प्रसिद्ध नैयायिक उदयनाचार्य को पराजित किया अपितु अनेक दार्शनिक ग्रन्थों की रचना कर, वे दर्शन-जगत् में भी प्रबुद्ध वेदान्ती के रूप में विख्यात हुये। 'खण्डनखण्डनखाद्य' नामक ग्रंथ में उन्होंने विभिन्न दार्शनिक मतों का तार्किक खण्डन कर अद्वैत वेदान्त की स्थापना की है।

- संस्कृत भाषा पर श्री हर्ष का असाधारण प्रभुत्व है। शब्द प्रयोग में श्रीहर्ष का कोश माघ और वाण से किंचितमात्र भी न्यून सिद्ध नहीं होता। किन्तु शब्द प्रयोग से भी अधिक विकसित और विस्तृत है उनके नित-नूतन अर्थों का कल्पना लोक। उन्होंने कई बार एक ही विषय का अनेक श्लोकों में वर्णन किया है, किन्तु अर्थ का पुनरावर्तन लेशमात्र भी कहीं प्रतीत नहीं होता।
- श्री हर्ष ने 'एकागत्यज तो नवार्थघटनाम्' की जो प्रतिज्ञा की है, उसे निश्चय ही पूर्ण करके दिखाया है। नैषध में एक ओर कल्पना जगत की अलोक सामान्य ऊंचाई है। तो दूसरी ओर दर्शन की तार्किक गहनता। वास्तव में इसी वैशिष्ट्य ने श्री हर्ष को अन्यतम बना दिया है। श्लेष की दुरूह जटिलता को कल्पना की अलौकिकता ने सरस बना दिया है। श्री हर्ष ने स्वयं अपने काव्य को 'श्रृंगारामृतशीतगुः' (श्रृंगार रूपी अमृत के लिये चन्द्रमा) कहा है।

- श्री हर्ष की महत्ता उनके एक अन्य वैशिष्ट्य के कारण भी है और वह है उनका अपने पूर्ववर्ती कवियों से नूतन प्रेरणा। उन्होंने पुरातन पद्धति का अन्धानुकरण नहीं किया है। कालिदास से उन्होंने प्रसाद गुण नहीं अपितु कल्पना, भारवि से चित्रालङ्कार आदि नहीं अपितु अर्थगौरव और माघ से कथा शैथिल्य नहीं, अपितु पाण्डित्य प्रदर्शन और वाग्वैशारदा आदि गुणों को अपनाया है।
- अलंकारों में 'श्लेष' श्रीहर्ष का प्रिय अलंकार है, और उसमें उन्हें असाधारण पटुता भी प्राप्त है। उनकी श्लेषमूलक पञ्चनली तो प्रसिद्ध ही है जिसमें एक ही श्लोक में नलरूपधारी पंचदेवों का वर्णन कर दिया गया है। श्रीहर्ष की इस श्लेषमूलक शैली ने ही संस्कृत काव्यों रीति काल में द्व्यर्थक तथा त्रयर्थक पद्य-रचना की नवीन शैली को जन्म दिया।
- रावपाण्डवीयम्, राघवनैषधीयम आदि द्व्यर्थक और त्र्यर्थक रचनाओं के प्रेरणास्त्रोत निश्चय ही श्रीहर्ष ही रहे हैं।

- नैषध श्रृंगार रस प्रधान महाकाव्य है और इसमें श्रृंगार के दोनों पक्षों संयोग तथा विप्रलंभ का प्रचुर प्रयोग है। दोनों ही पक्षों का वर्णन पर्याप्त एवं सुदीर्घ है।
- इस श्रृंगार रस सिक्त काव्य का उन्होंने उपमा, रूपक, अतिशयोक्ति, श्लेषादि अलंकारों से जो श्रृंगार किया है उससे काव्य की रसमयता द्विगुणित हो जाती है।
- सम्पूर्ण महाकाव्य में तीन चीजें विशेष रूप से ध्यान आकृष्ट करती हैं प्रथम श्लेषमयता द्वितीय कल्पना प्रगल्भता और तृतीय वर्णनपटुता श्रीहर्ष के समान कल्पना की ऊंची उड़ान बहुत कम कवियों में दीख पड़ती है। इस उड़ान में स्वभावतः अतिशयोक्ति की केन्द्रीय भूमिका हो जाती है। अन्य उपमादि अलङ्कार प्रायः श्लेष या अतिशयोक्ति का ही आश्रय लेकर चलते दिखते हैं। वस्तुतः अलौकिक सुन्दरी दमयन्ती का सौन्दर्य अतिशयोक्ति के प्रयोग से विशेष रूप से दमक उठता है।

- किन्तु, कई बार तो ऐसा भी लगने लगता है कि सम्पूर्ण वर्णन कृत्रिमता का एक आवरण ओढ़े हुये है। श्री हर्ष की दमयन्ती में वह स्वाभाविक सुन्दरता नहीं रह जाती, जो कालिदास की शकुन्तला में हमें दिखती है। राजा नल की कीर्ति, उसका प्रलाप, उसका शौर्य सभी इस प्रतिरञ्जना में झूठे से लगने लगते हैं।
- लेकिन अन्ततः, इस कल्पना का धनात्मक पक्ष इतना प्रबल है कि उपर्युक्त दोष गौण हो जाते हैं। उनकी कल्पनाओं से जो नितनूतन अर्थ अभिव्यजित होते हैं, उनकी मञ्जुलता उसकी अस्वाभाविकता को आवृत कर देती है। कहा भी गया है-

‘एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्क’ ॥

(कुमारसम्भवम्)

- श्री हर्ष के पद विन्यास में केवल पाण्डित्य ही नहीं दिखते अपितु लालित्य भी दिखते हैं। पदलालित्य की दृष्टि से नैषध पंचमहाकाव्यों (रघुवंशम्, कुमारसंभवम्, किरातार्जुनीयम्, शिशुपालबधम्, नैषधीयचरितम्) में सर्वश्रेष्ठ है। अतः दण्डी की ही भांति नैषध के भी विषय में यह उक्ति कही जाती है – **'नैषधे पदलालित्यम्'**। यह अलग बात है कि पाण्डित्य के शौर्य-प्रदर्शन में लालित्य का सौन्दर्य दर्शन प्रतिद्धत हो जाता है। श्री हर्ष की यह प्रगल्भता सर्वतोमुखी है चाहे भाव हो या भाषा, शब्द हो या अर्थ सभी में उनकी असाधारण पटुता झलकती रहती है। उनकी इस साहित्यिक प्रगल्भता में उनकी दार्शनिक तार्किक पटुता विशेष भूमिका निभाती है। लेकिन अनेकशः उनकी यह दार्शनिकता उनके कवित्व पर हावी दिखती है। उनकी काव्यकला प्रायशः उनके पाण्डित्य से बोझिल हो जाती है। कलापक्ष के उन्नयन में भावपक्ष का अपनयन हो गया है। दार्शनिक सिद्धान्तों और दृष्टांतों का बारम्बार प्रयोग भारतीय संस्कृति के विचारकों के लिये भी जटिलता उत्पन्न कर देता है और उसमें भी उनके श्लेषमूलक प्रयोग जटिलता को द्विगुणित कर देते हैं।

- श्री हर्ष प्रयोगधर्मा कवि है और इस प्रयोगधर्मिता के क्रम में उन्होने न केवल अनेक अप्रचलित शब्दों का प्रयोग किया है अपितु नवीन शब्दों का भी सृजन कर डाला है। उराहरणार्थ –

भूजानि	(राजा)
सूननायक	(कामदेव)
अधिगमिका	(ज्ञाता स्त्री) स्त्री
हसस्पृशम्	(हंसते हुये)
अगदंकारः	(वैष)
अपार	(समुद्र)
मिहिकारूचम्	(चन्द्रमा)

इत्यादि।

वार्तालाप आदि के प्रसंगों में भी उन्होंने अनेक प्रकार से वाक्य-विन्यास द्वारा स्वाभाविक प्रभाव उत्पन किया है, और यह इतना प्रभावी हुआ कि ये तत्कालीन विद्वद् समाज में आम बोलचाल में प्रयुक्त होने लगे थे जैसे –

आसितुं नादत (बैठने नहीं दिया)
बीक्षितुं नादत्त (देखने नहीं दिया)
कथमास्य दर्शविताहे (मैं कैसे मुंह दिखाऊंगा)

छन्द प्रयोग में भी श्री हर्ष को विशेष दक्षता प्राप्त थी। उन्होंने 'नैषध' में १९ छन्दों का प्रयोग किया है। ७ सगों में उपजाति छन्द है अतः यह उनका सबसे अधिक प्रिय छन्द ज्ञात होता है। ४ सगों में वंशस्थ वृत्त का प्रयोग है। इनके अतिरिक्त अनुष्टुप, वसन्ततिलका, स्वागता का दो - दो सर्गों में प्रयोग हुआ है। न्यूनाधिक रूप में अचलधृति, तोटक, मन्दाकान्ता, शिखरिणी, स्रग्धरा आदि छन्दों का भी प्रयोग हुआ है।

श्री हर्ष की न्यूनतायें

- (१) जटिल पाण्डित्य प्रदर्शन

(क) अप्रचलित शब्दों का प्रयोग
(ख) नवीन शब्दों का सृजन
(ग) दार्शनिक दृष्टान्तों एवं शास्त्रीय सन्दर्भो की दुरूहता
(१७वां सर्ग दार्शनिकतापूर्ण)
(घ) कल्पनाओं की क्लिष्टता
(ङ) श्लेष की जटिलता
(च) वर्णन में अनुचित विस्तार जैसे - दमयन्ती का सौन्दर्य विस्तार

द्वितीय सर्ग में हंस के मुख से सौन्दर्य-वर्णन हो जाने के बावजूद सम्पूर्ण सप्तम सर्ग उनके नख-शिख वर्णन से भरा हुआ है। पुनः दसवें सर्ग में भी स्वयंवर के समय इस वर्णन का पिष्टपेषण हुआ है।

(२) श्रृंगार का आवश्यकता से अधिक अश्लील वर्णन। महाभारत में नल-दमयन्ती के प्रेम का पवित्र और सात्विक रूप वर्णित है। पर श्री हर्ष ने उसे वासना एवं विलास के रंग में रंग कर चित्रित किया है। यह वर्णन अनेकशः अश्लीलता की सीमायें छूने लगता है।

(३) एक ही भाव का शब्दभेद से अनेक स्थलों पर आवृत्ति।

(४) एकाँगिता : जीवन के अन्य विविध पक्षों की उपेक्षा। श्री हर्ष चरित्र-चित्रण तथा कथानक की कलात्मक दृष्टि से निपुण नहीं कहे जा सकते। सम्पूर्ण कथानक मानव जीवन के केवल श्रृंगारिक पक्ष का चित्रण करता है।

(५) श्री हर्ष के सम्बन्ध में एक अन्य तथ्य भी खटकने वाला है और यह है उनका दर्प। उनकी आत्म-श्लाघा केवल पाण्डित्य प्रदर्शन में ही नहीं छिपी रह सकी है, अपितु प्रत्यक्षतः उनको गर्वोक्तियों में भी अभिव्यक्त हुई। आत्मश्लाघा की पराकाष्ठा तो वहां हो गयी है जहां भी अपने को चतुर्दशरत्न उत्पन्न करने वाला क्षीरसागर कहा है जबकि अन्य कवियों को दो-चार दिनों में सूख जाने वाली नदियों को उत्पन्न करने वाला पहाड़।

श्री हर्ष ने कम-से-कम नौ ग्रन्थों की रचना की जिनका उल्लेख उन्होंने नैषध में किया है। जिस प्रकार 'खण्डनखण्डखाद्य' उनके दार्शनिक ग्रन्थों में मुकुटमणि है, उसी प्रकार नैषध उनके काव्य ग्रन्थों की चूड़ामणि हैं।

धन्यवाद